राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय ।

राधास्वामी-मत-दर्शन

प्रकट गुरू को मानिये ग्रन्थ गवाही ले ।
जो चाहे दीदार को सीस उन चरनन दे ॥
सतसँग सेवा सार हैं साहब साँचे मीत ।
सतसँग सतगुरु साथ है उन बिन सभी अनीत ॥
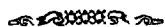
दयालबाग़, आगरा ।

फ़रवरी १६३०

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय।

राधास्वामी-मत-दर्शन

असली परमार्थी कार्रवाई क्या हो सकती है ?

१—दुनिया में जितने बड़े बड़े मत जारी हैं उन सब के चलाने वाले अभ्यासी पुरुष थे और अगर बनज़रे ग़ौर देखा जावे तो मालूम होगा कि मतलब उन पुरुषों का अपने मत के प्रचार से यही था कि जीव को दुःख से निवृत्ति हासिल हो और सुख की प्राप्ति हो और इस निमित्त उन्होंने जीवों को अपने चरणों में लगा कर कुछ न कुछ करनी उनसे करवाई, मगर आज कल देखने में आता है कि बहुत ही कम लोगों की तवज्जुह करनी की तरफ़ है—ज़्यादातर शास्त्र व ग्रन्थ पढ़ कर और ज़ाहिरी रस्मियात बजा लाकर अपने दिल को तसकीन दे रहे हैं कि हम सच्चे और असली पैरोकार फ़ुलाँ मत के हैं—और ऐसा नशा इस वाचिक ज्ञान और बहिर्मुख कार्रवाई का इन लोगों को हो रहा है कि अक़ले

सलीम का इस्तेमाल करना भी छूट गया है और अपने मत के बुज़ुर्गों व पुस्तकों की महिमा गाना और अपने मत को आदिमत और सर्वोत्तम मत सिद्ध करना और जहाँ तक मुमकिन हो झूठों सच्चों की जमैयत फ़राहम करना ही उन्होंने अपना परम अर्थ मान लिया है। एक मिनट के लिए भी दिल में यह ख़्याल नहीं आता कि ज़रा विचारें कि ख़ुद हमने क्या नफ़ा इस मत से हासिल किया और निज मतलब हमारा–यानी दुःख की निवृत्ति व सुख की प्राप्ति–किस दर्जे तक हमको हासिल हुआ और यह नहीं सोचते कि बानी मुबानी जो हमारे मत के थे किस क़द्र उन्होंने ज़ोर करनी व रहनी पर दिया है और कितनी तंगी व सख़्ती उठा कर वे ख़ुद अमल यानी अभ्यास मन के वश करने व इन्द्रियों के दमन करने के निमित्त जीवनपर्यन्त करते रहे और हम लोग जो अब आज़ाद दुनिया में विचरते हैं और शबोरोज़ मन की तरंगों में बह रहे हैं और जानते तक नहीं कि अभ्यास किसको कहते हैं किस मुँह से उपदेश अपने मत का कर सकते हैं!

२–ख़्याल करना चाहिये कि अगर कोई शख़्स चाहता है कि उसके तन की शक्तियाँ जगें यानी उसका बदन मज़बूत और फुर्तीला हो तो वह इसके लिये

किसी पहलवान या उस्ताद की शागिर्दी में रह कर तरह तरह की कसरत हस्बहिदायत सिखलाने वाले के करता है और कुछ अर्से तक ऐसा अमल कर के अपनी ग़रज़ हासिल करता है–और यह भी देखने में आता है कि मन बुद्धि की शक्तियाँ जगाने के लिये तालिबेइल्म को मदरसे व कालिज में जाकर उस्ताद व प्रोफ़ेसर से तालीम हासिल करनी होती है यानी ज़ेरेनज़र ऐसे शख़्स के, जिसने पहले अपने मन व बुद्धि की शक्तियों को जगा लिया है, रह कर तालिबेइल्म को ऐसी कसरत करनी होती है जिसकी मदद से उसके मन व बुद्धि की शक्तियाँ जागें। आश्चर्य है कि तन व मन की शक्तियों के जगाने के लिये तो यह तरीक़-अमल इस्तेमाल किया जावे और सुरत अर्थात् आत्मा यानी रूह की शक्तियों के जगाने के लिये न किसी उस्ताद यानी गुरू की तलाश की जावे और न ही किसी क़िस्म का अमल यानी अभ्यास इख़्तियार किया जावे और तन व मन की शक्तियों ही के जगाने से रूह की शक्तियों के जगने का दावा किया जावे। याद रहे कि जैसे सिर्फ़ बदन की कसरत करने से मन बुद्धि की शक्तियों का जगना ग़ैर मुमकिन है इसी तौर पर तन व मन की कसरत करने से सुरत यानी रूह की शक्तियों का जगना भी ग़ैर मुमकिन है और नीज़ जैसे बिला मदद उस्ताद के हर किसी के

बदन की कसरत करने में पूरा एहतिमाल हाथ पैर तोड़ लेने का है और जैसे कोई कमउम्र बच्चा अगर लाइब्रेरी में ताउम्र भी रक्खा जावे तो वह बिला मदद पढ़ाने वाले के आलिम नहीं हो सकता इसी तौर पर बिला मदद गुरू के अगर कोई पोथियों से अभ्यास की युक्ति पढ़ कर अमल करना शुरू करेगा भी तो ज़रूर बिल ज़रूर या तो अपनी हानि कर लेगा या थक थका कर जहाँ का तहाँ रह जावेगा । इस लिये निहायत लाज़िमी हुआ कि सब लोग, चाहे वह मानने वाले किसी मत के हों, भर्मना को छोड़ कर अव्वल सच्चे दिल से खोज अपने मत के अभ्यासियों का करें और जब कोई अभ्यासी मिल जावें तो उनकी ख़िदमत में हाज़िर रहकर जो मुनासिब करनी वे तजवीज़ फ़र्मावें अमल में लावें और कुछ अर्से अमल यानी अभ्यास करके देखें कि किस दर्जे तक तजरुबा उनको अपने निज मतलब यानी दुःख की निवृत्ति व सुख को प्राप्ति की निस्बत हासिल हुआ ।

३—एक और बात ग़ौर करने के क़ाबिल है यानी सब कोई जानता है कि मनुष्य के चोले में तीन वस्तुएँ हैं—अव्वल शरीर, दूसरे मन, तीसरे सुरत अर्थात् आत्मा यानी रूह । अगर शरीर की ज़बान को हिलाया जावे तो

ज़बान के हिलने से जो आवाज़ पैदा होती है दूसरा शरीरधारी उसको सुनकर जवाब देता है—अगर मन ही मन में यानी मन की ज़बान से किसी की निस्बत मनन या गुनावन किया जावे तो उसके मन पर असर पैदा हो जाता है जैसा कि कहा है–'दिल रा बदिल रहेस्त' और यह भी देखने में आता है कि अगर कोई शख़्स ज़रा शरीर से न्यारा हो, मसलन् कोई शख़्स गहरी नींद में हो या किसी दक़ीक़ मस्ले के हल करने में मसरूफ़ हो और अपनी तवज्जुह सर्वाङ्ग से उसी मस्ले पर लगाये हुए हो तो कुछ भी उसके सामने हो जावे या उसको ज़बान से बुलाया जावे वह मुतलक़ नहीं सुन सकता है और अगर कोई समाधि की हालत में हो तो उसके सामने कितना ही शोर क्यों न मचाया जावे उसपर कुछ भी असर नहीं होता है। 'कारपेन्टर' की फ़िज़ियालॉजी में एक अम्र वाक़आ रंजीतसिंह के वक़्त का दर्ज है यानी कोई फ़क़ीर ज़मीन के नीचे समाधिअवस्था में होकर चन्द माह तक मदफ़ून रहा और उसको मुतलक़ असर किसी बाहरी शोर व शर का नहीं हुआ। मतलब यह है कि देह की ज़बान हिलाने से दूसरा देहधारी आवाज़ सुन कर मुख़ातिब हो सकता है और मन की ज़बान हिलाने से दूसरे मन पर असर पड़ सकता है और देह की ज़बान हिलाने से (जो हरकत करने के लिये मोहताज मन की धार की है)

देह से न्यारे मनुष्य पर असर नहीं पहुँच सकता इसी तौर पर ज़बान से सुमिरन व पूजा पाठ करने या मन से मनन व विचार करने से उस कुल मालिक तक, जो रूह यानी आत्मा का भंडार है, कुछ असर नहीं पहुँच सकता। इसके लिये ज़रूरी है कि रूह यानी आत्मा की ज़बान से उसकी याद की जावे और ऐसा करने के लिये लाज़िमी है कि अव्वल रूह की ज़बान हिलाने की युक्ति दरियाफ़्त करके और उसपर कुछ अर्से अमल कर के रूह की ज़बान हिलाने का महावरा किया जावे और इसके लिए, जैसा कि दफ़ा २ में बयान हुआ, निहायत ज़रूरी है कि ऐसे पुरुषों से संयोग किया जावे जिन्होंने इस अभ्यास में कमाल हासिल किया है और जिनको साध सन्त महात्मा वग़ैरह नामों से मौसूम किया जाता है।

ख़ुद योगशास्त्र का दूसरा ही सूत्र है कि योग चित्त की वृत्ति के निरोध करने यानी रोकने को कहते हैं और कबीर साहब ने भी फ़र्माया है:—

'तन थिर मन थिर बचन थिर सुरत निरत थिर होय।
कहें कबीर इस पलक को कलप न पावे कोय॥'

फ़ुक़रा का भी क़ौल है:—

'चश्म बन्द ओ गोश बन्द ओ लब बिबन्द।
गर न बीनी सिर्रे हक़्क़ बर मन बिख़न्द॥'

यानी अव्वल अपने आँख व कान व लब (होटों) को बन्द करो तब मालिक का भेद ज़रूर नज़राई पड़ेगा-पस उस सच्चे मालिक के याद करने की सच्ची कारवाई में और उससे योग यानी वस्ल हासिल करने के अभ्यास में कहाँ गुंजायश ज़बान या तन या मन के हिलाने की हो सकती है–और जो लोग इसके ख़िलाफ़ ज़बान से भजन या मंत्र गाने या किसी बानी या कलाम का पाठ करने या हाथों से हवन वग़ैरह करने या तसबीह माला फेरने या तमाम देह चलाकर चार धाम परिक्रमा करने या घंटा शंख बजाकर आरती वग़ैरह करने ही से उम्मीद इस बात की रखते हैं कि निज मतलब उनका हासिल हो जावेगा कैसे जायज़ व दुरुस्त हो सकता है।

४–अगर अलफ़ाज़ मज़हब, पन्थ, मार्ग वग़ैरह के, जो इस सिलसिले में इस्तेमाल किये जाते हैं, लफ़्ज़ी मानी पर ग़ौर किया जावे तो मालूम होगा कि सब के मानी रास्ते के हैं। ज़ाहिर है कि रास्ते का होना दलील इस अम्र की है कि कोई न कोई मंज़िले मक़सूद ऐसी है जहाँ तक यह रास्ता जाता है। अब हर मज़हब के लोगों से सवाल यह होना चाहिए कि चलने वाला कौन है–चलना कहाँ से है–पहुँचना कहाँ है–और रास्ता किस क़िस्म का है। मगर देखने में आता है कि

बहुत से मतों में, खासकर जो हाल के ज़माने में प्रकट हुए हैं, मुतलक़ ज़िक्र भी इन बातों का नहीं है—सर्वाङ्ग करके तवज्जुह स्कूल व हस्पताल व यतीमखाने व मसजिद व मन्दिर बनाने या संस्कृतविद्या के पढ़ने पढ़ाने या शादी बेवगान का प्रचार करने या स्त्रियों को आज़ादी देने या राज्य हकूमत हासिल करने या लेक्चर अपने बाप दादा की महिमा पर देने या भारतमाता की तरफ़ से विलाप करने या तीर्थ व्रत व यात्रा करने वग़ैरह वग़ैरह कामों में दी जा रही है। हरचन्द सोशल तौर पर या किसी खास मतलब से इन कामों का करना बुरा न हो मगर इन सब कार्रवाइयों को मज़हब के ज़ैल में घसीटना सरासर ज़बरदस्ती है और मज़हब का नाम बदनाम करना है।

५—बहुत से लोग ज़ोर इस बात पर देते हैं कि प्राचीन समय के जो अभ्यास हैं, मसलन् हठयोग, प्राणायाम, मुद्रा का साधन वग़ैरह उनका प्रचार होना चाहिए क्योंकि उन ही की क्रियाएँ करने से परमात्मा से मेल हो सकता है। सब कोई जानता है कि अव्वल तो उन अभ्यासों के माहिर आज कल नहीं मिलते जिनकी खिदमत में रहकर उनकी कमाई की जावे और दूसरे परहेज़ व संयम उनके ऐसे सख्त हैं कि ज़रा सी बद-परहेज़ी करने में अन्देशा जान जाने या कम अज़ कम

शरीर का सदा के लिए रोगी बनने व आयन्दा के लिये निकम्मा हो जाने का है। उन अभ्यासों के करने के लिये पूरा ब्रह्मचर्य चाहिए जो कि इस समय में नदारद है—स्त्रियाँ और बच्चे और कमज़ोर व बीमार व बूढ़े आदमी उनकी कार्रवाई क़तई नहीं कर सकते—शूद्र वग़ैरह वर्णों के लोग अगर वे वाक़ई अपने धर्मानुसार बर्तें तो इस जानिब क़तई क़दम नहीं रख सकते—गोया कि अगर उन अभ्यासों की कमाई कोई कर सकता है तो सिर्फ़ ऐसे उच्च वर्ण के मनुष्य कर सकते हैं जो पूर्ण ब्रह्मचारी हों और वे भी उस हालत में जब कि उनको पूरे अभ्यासी गुरू की सोहबत हासिल हो। अगर यह बात तसलीम करली जावे तो फिर मालिक के चरणों से मेल का अधिकारी आज कल के ज़माने में तो कोई भी नहीं रहा—ख़ुद वे लोग भी, जो बड़े ज़ोर शोर से उन अभ्यासों की महिमा गा रहे हैं इस दौलत पाने के नाक़ाबिल हैं—फिर उनके प्रचार से क्या फ़ायदा होगा।

६—फ़र्ज़ कीजिये कि एक पढ़ा लिखा शख़्स है जिसकी उम्र बीस या पच्चीस बरस की है—उसको शौक़ हुआ कि मालिक का दर्शन हासिल करे—वैदिकधर्मी भाइयों के पास जाता है और अपना हाल बयान करता

है। ज़वाब मिलता है कि सुनो—

'हर जगह मौजूद है वह पर नज़र आता नहीं।
योगसाधन के बिना उसको कोई पाता नहीं॥'

ज़रूरी था कि तुम पहले कम अज़ कम पच्चीस बरस तक ब्रह्मचर्य रखते—ब्रह्मचर्य तुमने रक्खा नहीं पस योगाभ्यास तुम कर नहीं सकते इस लिये सिर्फ़ गायत्रीमंत्र का जप करो, हवन करो, यज्ञ करो, वेद शास्त्रों का मुताला करो वग़ैरह वग़ैरह, आयन्दा किसी जन्म में जब कभी इन्सान बनोगे और भाग्य से 'गुरुकुल' में रहकर तालीम पाओगे और अभ्यासी गुरू से मिलोगे तब अभ्यास करने पर मालिक का दर्शन प्राप्त होगा। मुसलमान भाइयों के पास जाता है और अपने दर्द दिल का हाल कहता है। जवाब मिलता है कि पैग़म्बर साहब पर ईमान लाओ, क़ुरान शरीफ़ पढ़ो, नमाज़ पढ़ो, रोज़ा रक्खो, हज करो, ख़ैरात करो, मरने के बाद वक़्त मुनासिब पर बिहिश्ते बरीं में क़याम मिलेगा। ईसाई भाई भी इसी क़िस्म का जवाब देते हैं—हज़रत ईसा पर ईमान लाओ, इंजील मुक़द्दस का मुताला करो, और उसपर ग़ौर करो, नमाज़ पढ़ो, जब क़यामत का दिन आवेगा उस दिन तुम्हारी रूह क़ब्र से निकलेगी और बिहिश्त में ठिकाना पावेगी। सिक्ख भाइयों के पास सवाल करने पर जवाब मिलता है कि

गुरू ग्रन्थ साहब का पाठ करो, गुरुद्वारे के दर्शन करो, कढ़ा परशाद तक़सीम कराओ, भेंट पूजा चढ़ाओ, आरती कराओ, 'वाहगुरू वाहगुरू' का दिन रात मुंह से जप करो, गुरू महाराज सहायी होंगे। इसी क़िस्म के जवाब और मज़ाहिब से भी मिलते हैं। अब ग़ौर का मुक़ाम है कि इन जवाबों से उस सच्चे विरही खोजी की किस तरह शान्ति हो सकती है। वह जवाब देता है कि अगर मरने से पहले यानी इसी जन्म में मालिक का दर्शन नहीं मिल सकता तो क्या एतबार है कि आयन्दा भी मिलेगा—ख़ुद तुमको दर्शन मिला नहीं औरों को उम्मीद किस मुँह से दिलाते हो—कार्रवाइयाँ जितनी बतलाते हो सब सम्बन्ध तन या मन से रखती हैं—तन व मन हिलाने से चित्त और भी चलायमान यानी चंचल हो जावेगा और सुरत यानी आत्मा की धार विशेष तौर पर तन व मन और उनके सामान में पैवस्त हो जावेगी—चाहता हूँ मैं मालिक के दर्शन करना और लगाते हो तुम मुझ को तन और मन की क्रियाओं में और शरण दिलवाते हो उन महापुरुषों की जिनको न मैंने और न तुम्हीं ने आँख से देखा है और उम्मीद बँधवाते हो कि आयन्दा किसी ज़माने में मेरी आशा पूर्ण होगी; बस रहने दीजिये—'ईं ख़्यालस्त ओ मुहालस्त ओ जुनूं।' यानी यह सिर्फ़ ख़्याल है, हासिल होना

मुश्किल है और पागलपन की बात है।

७—ऊपर के बयान से हर्गिज़ यह मतलब नहीं है कि किसी तौर पर दूसरे मज़हबों का निरादर किया जावे बल्कि मंशा यह ज़ाहिर करने से है कि बवजह गुप्त हो जाने आचार्यों और सच्चे अभ्यासियों के उन मतों में अब जान नहीं रही है—जिस वक़्त पैग़म्बर साहब, हज़रत मसीह, रामचन्द्र जी या कृष्ण महाराज या गुरू नानक साहब वग़ैरह सच्चे आचार्य देहरूप में बिराजमान थे उस वक़्त जो जो जीव उनके चरणों में आये बेशक उन समर्थ पुरुषों ने उन जीवों का अपने दर्जे तक का उद्धार फ़र्माया यानी जिस धाम से वे ख़ुद तशरीफ़ लाये थे उस धाम में अपने शरणागत जीवों को पहुँचाने का इन्तिज़ाम फ़र्माया। अब चूँकि फ़क़त उनका कलाम रह गया है और आमिल कोई रहा नहीं और बजाय अभ्यास के ज़ाहिरी रस्मियात व मन इन्द्रियों की कारंवाइयाँ प्रचलित होगई हैं इस लिए उनसे हुसूले मुराद नामुमकिन है।

८—इन ज़रूरी बातों का तज़किरा करने के बाद निहायत मुनासिब मालूम होता है कि थोड़ा सा वर्णन इस बात का किया जावे कि सच्चा क़ुदरती मज़हब क्या हो सकता है। जैसा कि दफ़ा ३ में ज़िक्र किया गया मनुष्य के शरीर में तीन चीज़ें हैं—तन, मन व सुरत

यानी रूह–तन जो पाँच तत्त्व का बना हुआ है उसका भण्डार यानी पाँच तत्त्व की रचना आँख से नज़र आई पड़ती है। इसी भण्डार से तन का मसाला लिया जाता है और मर जाने पर वह मसाला इसी भण्डार में समा जाता है। इसी तौर पर मन का भी भण्डार है जिसको ब्रह्माण्ड कहते हैं। ऐसे ही सुरत यानी रूह के भण्डार को मालिके कुल कहते हैं। यह देखने में आता है कि तन सरासर ग़ुलामी मन की करता है यानी जो कुछ मन चाहता है तन से कार्रवाई कराता है और ये मन और तन दोनों मोहताज हर वक़्त सुरत यानी रूह की धार के हैं यानी अगर यह धार खिँच जावे तो मन और तन दोनों बेकार हो जाते हैं गोया कि रूह ही की शक्ति के वसीले से मन व तन दोनों का काम चलता है। यह भी देखा जाता है कि जिस वक़्त से रूह तन में प्रवेश करती है उस वक़्त से रचना की सब जड़ शक्तियाँ–गर्मी, बिजली वग़ैरह और सब तत्त्व–हवा, पानी वग़ैरह उसकी मातहती में काम करते हैं और जिस्म की तैयारी व शृङ्गार में पूरी इमदाद देते हैं– चाहे जिस्म इन्सान का हो या हैवान का या दरख़्त वग़ैरह का। इससे यह नतीजा निकलता है कि सुरत यानी चेतन शक्ति ही सर्वोपरि शक्ति इस रचना में है और कुल मालिक, जो सर्व सुरतशक्तियों के भण्डार

हैं, परम चेतन शक्ति के सोत पोत हुए और सुरतें उनसे मिस्ल किरण के निकलीं। जैसे सूरज और सूरज की किरण में सदा सम्बन्ध क़ायम रहता है ऐसे ही सुरत और कुल मालिक में भी सदा सिलसिला चेतन धार के ज़रिये क़ायम रहना लाज़िमी है। और क़ायदा है कि जहाँ पर धार है वहाँ पर धुन भी है। इस लिये उस चेतन धार से भी सदा धुन प्रकट हो रही होगी। अगर उस धुन यानी शब्द को मुनासिब तरीक़े से सुना जावे यानी उस शब्द की धार को पकड़ा जावे तो सुनने वाला ज़रूर उस धाम तक पहुँच सकता है जहाँ से उस धुन का उत्थान है और ज़ाहिर है कि उत्थान का स्थान वही होगा कि जहाँ से सुरत शक्ति का निकास हुआ और वह सोत पोत यानी कुल मालिक ही है। गोयाकि उस धुन को पकड़ कर सुरत अपने निज भण्डार में पहुँच सकती है। इस लिए यही क़ुदरती और सच्चा मज़हब हुआ।

हासिल कलाम यह कि चलने वाली सुरत है, पहुँचना अपने सोत पोत यानी निज भण्डार में है, रास्ता वह चेतन धार है जो सदा सुरत को सोत पोत से मिलाये हुए है, युक्ति चलने की उस धुन को पकड़ के चढ़ना है जो चेतन धार से प्रकट हो रही है। अब सिर्फ़ यह सवाल रह जाता है कि चलना कहाँ से है।

९—इस तन में ६ चक्र हैं:— पहिला गुदा, दूसरा इन्द्रिय, तीसरा नाभि, चौथा हृदय, पाँचवाँ कण्ठ, छठा छठाचक्र। तमाम जिस्म की कार्रवाई इन्हीं चक्रों की मार्फ़त हो रही है।

जब कोई शख़्स भूली हुई बात को याद करना चाहता है या किसी मुश्किल मस्ले पर विचार करता है तो देखने में आता है कि पेन्सिल या क़लम या उँगलियाँ नाक की जड़ के क़रीब रख कर सोचता है यानी तवज्जुह की धार को वहाँ पर समेटता है।

जब इन्सान मरने लगता है तो अव्वल हाथ पाँव ठंडे होते हैं बाद में अक्सर एक सियाह दस्त आता है जो निशान गुदाचक्र के खुलने का है। गुदाचक्र से जान सिमट कर इन्द्रियचक्र में फिर नाभिचक्र में फिर हृदय और फिर कण्ठचक्र में आती है और कण्ठ में घर्घराहट होती है। इसके बाद आँखों की पुतलियाँ उलटती हैं और चोला छूट जाता है।

बाज़ औक़ात लोगों को पता नहीं चलता कि इन्सान मर गया है या नहीं। मस्लन साँप के काटने की हालत में, मूर्छा में कुछ अर्से रहने की हालत में, वग़ैरह वग़ैरह। ऐसे वक़्तों पर डाक्टर लोग आँख की पुतली को मुलाहिज़ा करके पता लगाते हैं कि जान बाक़ी है

था नहीं। इन सब बयानात से ज़ाहिर होता है कि इन्सान की सुरत की बैठक का मुक़ाम कहीं पर दोनों आँखों के मध्य के मुक़ाबिल अन्दर की तरफ़ है और वहाँ से उसकी किरनियाँ इन्द्रियों और देह में फैल रही हैं—इस लिए चलना इसी बैठक के मुक़ाम से होगा।

१०—मगर पेश्तर इसके कि कोई इन्सान चलने के लिए क़दम उठा सके निहायत लाज़िमी है कि अव्वल वह अपनी सुरत की ताक़त को थोड़ा बहुत जगा ले। यहाँ पर हम लोगों का पृथिवी पर बास है जोकि इस पिण्ड का हृदयचक्र है और जाग्रत अवस्था की कार्रवाई हम लोग अपने हृदयचक्र ही से करते हैं यानी सुरत की मुख्य धार हृदय पर उतर कर सब कार्रवाई तन और मन की कराती है। अब देखना चाहिए कि इस घाट पर कार्रवाई करने की ताक़त जीव में कैसे जागती है। किसी महीने दो महीने के बच्चे को देखिये तो मालूम होगा कि न तो वह आँख से देख सकता है और न कान से सुन सकता है और न ही और किसी इन्द्रिय द्वारा ज्ञान ले सकता है—धीरे धीरे ज्यों ज्यों माँ बाप का रूप देखता है और उनका बोल सुनता है चेतन होता जाता है—रफ़्ता रफ़्ता वह इस क़ाबिल बन जाता है कि माँ

के इशारे से चिराग़ की लौ की तरफ़ ताकने लगता है और माँ की आवाज़ सुनने लगता है—माँ अक्सर औक़ात चुटकी बजाकर या कोई बाजा बजाकर उसकी तवज्जुह अपने या बाजे की जानिब मबज़ूल किया करती है। ज्यों ज्यों बच्चा बड़ा होता है माँ उससे चीज़ों या रिश्तेदारों के नाम बुलवाती है यानी मुहावरा उससे नाम बोलने का कराती है और बाद में चीज़ें दिखला दिखला कर उनके नामों से बच्चे को मानूस करती है—इस तौर पर बच्चे का संसार का ज्ञान बढ़ता जाता है और मन इन्द्रियों की ताक़तें जागती चली जाती हैं। अगर ऐसा इन्तिज़ाम न किया जावे तो बच्चा बड़ा होने पर निरा जानवर रहेगा। चुनांचे चन्द साल हुए आगरा के क़रीब मुक़ाम सिकन्दरा में पादरी लोगों के पास तालीम व तरबियत के लिये एक ऐसा शख़्स आया था कि जो शिकार खेलते वक़्त जङ्गल में भेड़िये के संग फिरता हुआ पकड़ा गया था। यह शख़्स बिलकुल नंगा था और मिस्ल भेड़िये के हाथ पाँव के बल चलता था और बोली भेड़िये की सी बोलता था और तमाम आदतें उसकी जङ्गली जानवरों की सी थीं—दरियाफ़्त हुआ कि जब यह बच्चा था तो भेड़िया इसको उठा कर ले भागा था और भेड़िये ही ने इसकी परवरिश की थी—पकड़े जाने पर पादरी लोगों ने इसको सीधा खड़ा होना सिखाया और बहुत कुछ कोशिश इन्सानी बोली

सिखाने की की मगर उसमें हैवानी आदतें इस क़दर ग़ालिब थीं कि बहुत ही कम कामयाबी हुई। आख़िर दो तीन बरस ज़िन्दा रह कर मर गया। सिकन्दरा में अब तक उसकी क़ब्र मौजूद है। अलावा इसके अकबर बादशाह के गुंगमहल का हाल सबको मालूम है यानी १२ बरस की अलहदगी के बाद जब बच्चे गुंगमहल से निकाले गये तो सिवाय ग़ाँय ग़ाँय करने के कुछ न बोल सकते थे। इस लिये हृदयघाट की शक्तियाँ जगाने के लिये निहायत लाज़िमी है कि अव्वल बच्चा मनुष्य के स्वरूप व मनुष्य के बोल से यानी जिन्होंने इस घाट पर चेतनता जगाई है उनसे संयोग करे। इसी तौर पर सुरत के घाट पर सुरत की शक्तियाँ जगाने के लिये लाज़िमी है कि सुरत की बैठक के स्थान पर चेतन बोल व चेतन रूप से संयोग किया जावे। जब किसी क़दर ताक़त सुरत की जग जावे तब शब्द की डोर को पकड़ कर कार्रवाई ऊँचे चढ़ने की की जा सकती है।

११—इस तहक़ीक़ात से नतीजा यह निकलता है कि अव्वल चेतन नाम व चेतन रूप का पता लगाया जावे—निज चेतन नाम सिवाय उस आदि शब्द के कुछ नहीं हो सकता जो रचना के आदि में चेतन शक्ति के कारकुन होने से प्रकट हुआ—इस लिये ज़रूरी हुआ कि ऐसे पुरुष की सोहबत की जावे जिसका इस चेतन नाम या बोल

से मेल है और जिसके मेल से वह आप सुरत के घाट पर सदा चेतन है। सन्तमत में इन्हीं को सन्त सतगुरु कहते हैं। शौक़ीन परमार्थी को लाज़िम है कि मिल जाने पर वह कमर बाँध कर उनकी सेवा में तत्पर हो और जैसे तैसे उनकी तवज्जुह अपने ऊपर ले और जहाँ तक मुमकिन हो गाढ़ी प्रीति उनके चरणों में क़ायम करे। ऐसा करने से दो फ़ायदे हासिल होंगे। अव्वल तो उनकी वजह से इसको संग साथ ऐसे शख़्सों का मिलेगा जो आगे ही इस कार्रवाई में मसरूफ़ हैं और उनकी मदद से इसकी रहनी गहनी सहज में दुरुस्त होती जावेगी और सच्चा अनुराग व गहरा शौक़ परमार्थ का इसके चित्त में पैदा होता जावेगा। और दूसरे उन महापुरुष के संयोग से सहज में इसके तन व मन की चंचलता और मलिनता दूर होती जावेंगी और रफ़्ता रफ़्ता जब यह अभ्यास करने के क़ाबिल हो जावेगा वे दया कर के इसको युक्ति अभ्यास की बतावेंगे और यह अपने अनुराग की मदद से और सन्त सतगुरु की मेहर से थोड़े ही अर्से में अपने परम पिता के दर्शन और उनकी दया व मेहर के परचे अन्तर में हासिल करके अपने भागों को सराहेगा और बार बार यह कड़ी इसकी ज़बान पर आवेगी :—

'धन सतगुरु धन उनकी संगति।
जिस प्रताप पाई मैं यह गति।'

१२–अब सवाल किया जा सकता है कि ऐसे महापुरुष की परख पहिचान क्या है यानी कैसे पता चले कि ये मामूली इन्सान या धोखा देने वाले नहीं हैं बल्कि पूरे गुरू हैं। ख़ास परख पहिचान तो उनकी वही है जो वे दया करके खुद जीव को बख़्शें। मगर इस क़दर तो यह मालूम कर सकता है कि आया वे शब्द अभ्यास की महिमा करते हैं या नहीं और नीज़ उनकी रहनी गहनी से परख सकता है कि आया वे खुद भी शब्द में रत हैं या नहीं। दूसरे यह कि जिसकी सुरत की शक्ति जगी है वह सदा सुरत के अङ्गों में वर्तेगा यानी मनसा, वाचा, कर्मणा, सदा शील, सन्तोष, विरह, प्रेम और ज्ञान की झलक उसकी ज़ात से आवेगी। बर्ख़िलाफ़ इसके जहाँ मन की कार्रवाई होगी वहाँ से सदा काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कार की बदबू आवेगी–इतनी तमीज़ भी ज़रूर हर मुतलाशी कर सकता है। तीसरे अगर वे सुरतवन्त हैं यानी सुरत का घाट उनका जगा है तो वे सब काम काज अपना अचिन्त होकर करेंगे–सोच और विचार, चिन्ता और फ़िक्र उनके नज़दीक नहीं आवेंगे बल्कि जो कोई उनकी सोहबत में रहेगा वह भी इन विघ्नों से रहित होकर किसी क़दर निश्चिन्त रहेगा। हम लोगों

को सुरतवन्त होने का ठीक ठीक तजरुबा नहीं है मगर बच्चे को देखिये—चूँकि उसकी सुरत की धार बहुत कम नीचे उतरी होती है और बहुत ही कम संसार में फैली होती है इसलिये वह सदा अचिन्त और मगन रहकर खेलता कूदता है—इससे अन्दाज़ा हो सकता है कि सुरतवन्त पुरुष सदा किस क़दर अचिन्त और मगन रहता है। चूँकि बच्चे की मन और तन की शक्तियाँ जगी नहीं होतीं इसलिये उसकी कार्रवाई में नादानी और भद्दापन रहता है मगर चूँकि सुरतवन्त पुरुष की तन मन की शक्तियाँ भी भरपूर जगी हैं इसलिये उसकी सब कार्रवाई भी निहायत सुडौल और सुगम होती है। सब काम काज सहज स्वभाव करता हुआ सदा अपने में रत और मगन रहता है और दुनिया के मुश्किल से मुश्किल काम भी निहायत सहूलियत से सरंजाम देता है। बख़िलाफ़ इसके जो लोग सोच सोच कर और दूसरों से सलाह मश्वरा करके अपना काम काज करते हैं साफ़ ज़ाहिर है कि वे मनवन्त यानी जीव हैं—उनसे काज नहीं सरेगा। शुरू शुरू में खोजी के लिये ये तीन परख पहिचानें काफ़ी हैं बाद में उनकी सोहबत व ख़िदमत व अभ्यास की कमाई करने से उसको गहरे से गहरे तजरुबे उनकी समर्थता और महत्ता के अज़ख़ुद होते जावेंगे और गहरी प्रीति

और प्रतीति उनके चरणों में बढ़ती जावेगी।

शब्द

ज़रा तुम होश में आओ
हँसी और दिल्लगी छोड़ो।
यह ग़फ़लत ज़हरे क़ातिल है
जहाँ तक हो सके बचना ॥ १ ॥

जहाँ में आन कर साहब
जहाँ तक बन पड़े तुमसे।
सँभल कर रास्ता चलना
क़दम को फूँक कर रखना ॥ २ ॥

मिज़ाजे आशकी गर है
दरद इश्क़े हक़ीक़ी भी।
मजाज़ी इश्क़ से हट कर
हक़ीक़ी में दख़ल करना ॥ ३ ॥

अलग हो बुत व काबे से
नज़र अन्दाज़ कर सबको।
गली कूचे से नाफ़िर हो
सुराते इश्क़ पर चलना ॥ ४ ॥

फ़हम इदराक कुछ तेरे
मुआविन हो नहीं सकते।

यह राह अज़बसकि नाज़ुक है
नज़ाकत से क़दम धरना ॥ ५ ॥
मगर सूरत है इक ऐसी
कि मुश्किल हल हो सब जिससे।
सभी सामाँ मुयस्सर हों
सहज हो रास्ता कटना ॥ ६ ॥
मिलें ख़ुशबख़्ती से तुमको
कहीं जो मुर्शिदे कामिल।
कमर को बाँध कर ख़िद्मत
में दिल दीदा से जा लगना ॥ ७ ॥
मेहर जब उनको आवेगी
शग़ल सुल्तानुल् अज़कारी।
बतावेंगे वह तुमको तब
उसी का फिर शग़ल करना ॥ ८ ॥
मेहर से पीर की इक दिन
सफ़र अंजाम हो जावे।
मिले फिर मंज़िले अबदी
ख़तम हो जीना और मरना ॥ ९ ॥
ख़ुशा वख़्ता कि आख़िर शुद
मरा ईं जुम्ला दिक़्क़तहा।
ज़े मेहरे राधास्वामी अम
बदर रफ़्तम अज़ीं रखना ॥ १० ॥

राधास्वामीमत का हाल ।

राधास्वामीमत के आचार्य ।

१३—परम पुरुष पूरन धनी हुज़ूर स्वामीजी महाराज, जो प्रथम आचार्य राधास्वामीमत के थे, शहर आगरा मोहल्ला पन्नीगली में अगस्त सन् १८१८ ई० में एक शरीफ़ खत्री घराने में प्रकट हुए । अवायल उम्र ही में आपने जो युक्ति अभ्यास की राधास्वामीमत में बतलाई जाती है उसका अभ्यास करना शुरू कर दिया था। जो जो लोग आपके संयोग में आते थे गहरा परमार्थी असर चित्त पर लेकर जाते थे। सन् १८६१ ई० में आपने सिलसिला सतसङ्ग आम का जारी फ़र्माया और जून सन् १८७८ ई० तक क़ायम रखकर गुप्त होगये। शहर के बाहर स्वामीबाग़ में आपकी समाधि बनी है। दूसरे आचार्य इस मत के परम गुरू राय सालिगराम साहब बहादुर हुए, जिनको चरनसेवक हुज़ूर महाराज के नाम से मौसूम करते हैं। आपने जून सन् १८७८ ई० से लेकर दिसम्बर सन् १८९८ ई० तक सिलसिला सतसङ्ग का जारी रक्खा। आपकी समाधि मोहल्ला पीपलमण्डी

शहर आगरा में वाक़े है। तीसरे आचार्य इस मत के, रहने वाले शहर बनारस के थे। आपको परम गुरू महाराज साहब के नाम से मौसूम किया जाता है। आपने दिसम्बर सन् १८९८ ई० से १२ अक्तूबर सन् १९०७ ई० तक ज़्यादातर शहर इलाहाबाद में और कुछ अर्से बनारस में बड़ी धूम धाम से सतसङ्ग जारी रक्खा। आपकी समाधि शहर बनारस में स्वामीबाग़ में बनी है। आपके बाद जो राधास्वामीमत के चौथे आचार्य हुए उनको चरनसेवक परम गुरू हुज़ूर सरकार साहब के नाम से याद करते हैं। आपने अक्तूबर सन् १९०७ ई० से लेकर ७ दिसम्बर सन् १९१३ ई० तक बड़े जलाल के साथ कुछ अर्से ग़ाज़ीपुर में बाक़ी हिस्सा मुरार ज़िला शाहाबाद में व मंसूरी वग़ैरह में सतसङ्ग फ़र्माया। आपके ज़माने में हज़ारों नये लोग सतसङ्ग में शरीक हुए और बड़ी तरक़्क़ी व तक़वियत इस मत को हासिल हुई। आज कल सेन्ट्रल सतसङ्ग व हेडक्वार्टर राधास्वामी सतसङ्ग सभा का दयालबाग़ आगरा में है। राधास्वामीमत के पैरोकार हुज़ूर स्वामी जी महाराज को, जो बानी मुबानी इस मत के हैं, कुल मालिक हुज़ूर राधास्वामी दयाल का अवतार मानते हैं यानी यह कि उस कुल

मालिक की निज धार ने जीवों के उद्धार के निमित्त मनुष्यचोला धारण फ़र्माया और यह चोला छोड़ने पर उस धार की कार्रवाई मार्फ़त दूसरे चोले के होनी शुरू हुई—ऐसे चोले को गुरुमुख कहते हैं। इस चोले को रचने वाली मामूली जीवसुरत नहीं होती बल्कि निज अंश कुल मालिक की होती है जो कि उनकी आज्ञा-नुसार यहाँ पर जन्म लेकर चोला रचती है ताकि वक़्त मुनासिब पर कार्रवाई उसकी मार्फ़त जारी होकर जीवों के उद्धार का सिलसिला मुतवातिर जारी रह सके। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि राधास्वामीमत पर जो मर्दुमपरस्ती का इलज़ाम लगाया जाता है वह बे सरोपा है यानी जबतक गुरुमुख चोले में वह निज धार कुल मालिक की प्रवेश न करे कोई शख़्स उसके जानिब मुख़ातिब नहीं होता है। गोया कि परस्तिश व महिमा राधास्वामीमत में सिर्फ़ कुल मालिक की निज धार की है।

१४—एक सन्त सतगुरु के गुप्त होने के बाद जब दूसरे प्रकट होते हैं उस वक़्त राधास्वामीमत में कोई बाहरी कार्रवाई गद्दीनशीनी वग़ैरह की मुतलक़ नहीं होती। प्रकट होने से मतलब पराये घट में हो जाने यानी बस जाने से है। यानी जब निज धार नये चोले

में कारकुन होती है तो वह सेवकों को अन्तरी बाहरी निज परचे देकर रफ़्ता रफ़्ता चरणों में खैंचती है और होते होते सबके हृदय में इस नये चोले की महिमा व बुज़ुर्गी समा जाती है। इस लिये कोई ख़ास बहिर्मुख कार्रवाई किसी ख़ास समय पर मिस्ल दूसरे मतों या संसारी इन्तिज़ामों के राधास्वामीमत में नहीं की जाती बल्कि हर सत्संगी के लिये गद्दीनशीनी उस दिन से हुई जिस दिन उसको प्रतीति उस चोले में निज धार की मौजूदगी की प्राप्त हुई।

१५–ज़ाहिर है कि यह इन्तिज़ाम गद्दी बदलने का राधास्वामीमत में बिलकुल अनोखा और अचरजी है और दुनिया में इसकी नज़ीर कहीं नहीं है और बजुज़ उस समर्थ धार के ऐसी कार्रवाई का ख़ूब-सूरती से सरंजाम पाना ग़ैरमुमकिन है। मन जो कि सख़्त दुश्मन परमार्थ का है, जैसा कि फ़र्माया गया है:–
'मित्र न जानो बैरी पूरा। गुरुभक्ती से डाले दूरा।'
ऐसे मौक़ों पर तरह तरह के रंग दिखलाता है। असल में तो वह समर्थ दयाल यह अवसर ख़ुद इस मौज से रचते हैं कि मन की पाज खुले और प्रेमी भक्त अपने व दूसरे मनों की दुर्दशा देखकर ज़्यादा से ज़्यादा नफ़रत इस पाजी से करने लगें और सन्त

सतगुरु के चरणों में आयन्दा गहरी आरज़ूमन्दी के साथ मुख़ातिब हों ताकि इस बैरी से रिहाई की कार्रवाई और भी तेज़ी के साथ अमल में आवे। साथ ही साथ ऐसे मौक़ों पर मालिक अपनी समर्थता व दयालुता का खुल्लम खुल्ला सुबूत सब भक्तों को देकर उनके हृदयों में प्रीति और प्रतीति की नींव और ज़्यादा मज़बूत फ़र्माता है यानी ऐसे समय पर लोग अपने मन के धोखे में आकर इधर उधर ख़्यालात उठाते हैं और कुछ अर्से के लिये जहाँ पर सच्ची कार्रवाई का आग़ाज़ होता है उससे बिरोध करते हैं मगर जैसा कि बारहा तजरुबे से साबित हुआ देर अबेर सबके सब खोजी भक्तजन चरणों में आ लगते हैं और अपनी करतूत पर निहायत शरमिन्दा होते हैं और बजाय किसी क़िस्म की सज़ा के इनाम में गहरा प्रेम व भक्ति मालिक के दरबार से पाने पर हृदय में गद्‌गद् हो जाते हैं। ज़ाहिर है कि इस क़िस्म की कार्रवाई दो चार क्या बल्कि सौ दो सौ मन मिलकर भी नहीं कर सकते और यह एक तरह से सच्चा और पूरा सुबूत निज धार की मौजूदगी का और इस मत के जीता जागता होने का है।

राधास्वामीमत की निस्बत जैसे मर्दुमपरस्ती का इलज़ाम बेबुनियाद है इसी तौर पर समाधि-

परस्ती व पवित्र-कुल-परस्ती का इलज़ाम भी सरासर लग़ो है। चूँकि समाधि में पवित्र रज और अस्थियाँ सन्त सतगुरु के देहस्वरूप की रक्खी होती हैं इस लिये समाधि की ताज़ीम कमाल दर्जे की की जाती है। इसी तौर पर बवजह ख़ून के रिश्ते के असहाब पवित्र कुल का अदब व सम्मान किया जाता है मगर हर्गिज़ ऐसा अक़ीदा नहीं है कि सिर्फ़ असहाब पवित्र कुल की सेवा करने से या समाधि पर मत्था टेकने से जीव का उद्धार हो सकता है-उद्धार के लिये आशा केवल सन्त सतगुरु वक़्त ही के चरणों में बाँधी जाती है, जैसा कि फ़र्माया भी है:—

'राधास्वामी मुर्शिद ख़ुदा दिखायें री।
राधास्वामी पीरपरस्ती सिखायें री॥'

'सब को करूँ प्रनाम जोड़ कर।
पर कोई नहिं सतगुरु समसर॥'

बल्कि इस मत में शिरकत से पहले हर शख़्स को जो तीन शर्तें माननी होती हैं उनमें से एक शर्त में साफ़ साफ़ इशारा इस तरफ़ है।

शर्तों का बयान।

१६-राधास्वामीमत में शरीक होने के लिये शर्तें ये हैं:-

अव्वल-गोश्त वग़ैरह से क़तई परहेज़-गोश्त में अण्डा, मछली, मछली का तेल वग़ैरह सब शामिल हैं।

दोयम-शराब व दीगर मुनश्शी अशिया से क़तई परहेज़-इसमें अफ़यून, भाँग, चरस वग़ैरह सब शामिल हैं। तम्बाकू व चाय पीने की इजाज़त है।

सोयम-राधास्वामी नाम कुल मालिक का ध्वन्यात्मक नाम मानना और इष्ट व निशाना हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों का धारण करना।

शर्त नम्बर १ के संग संग हर सतसंगी पर यह भी फ़र्ज़ है कि जहाँ तक होसके चित्त कोमल और दयावान करने की कोशिश करे, और शर्त नम्बर २ के संग संग यह भी लाज़िमी है कि सतसंगी किसी स्वार्थी परमार्थी वस्तु या सामान का नशा चित्त में धारण न करे, और शर्त नम्बर ३ के संग संग यह भी ज़रूरी है कि सिवाय सन्त सतगुरुस्वरूप के, जिसमें कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल की निज धार विराजमान है, निज कल्याण की कार्रवाई के लिये मुतलक़ आशा किसी और जानिब न बाँधे।

इन सब बातों के मुताला करने से मालूम होगा कि किस क़दर साफ़ साफ़ हिदायतें इस मत में स्वार्थी परमार्थी रहनी गहनी की निस्बत हैं और मन के लिये कम से कम गुंजायश अपना खेल खेलने के लिये छोड़ी गई है।

युक्ति का बयान ।

१७-जो शख़्स इस मत को समझ बूझ लेने के बाद मज़कूरा बाला शरायत क़बूल कर लेता है उसको अव्वल युक्ति सुमिरन ध्यान की बतलाई जाती है-क़रीब दो माह तक उसके मुताबिक़ अमल करके उसको अपना अन्तरी हाल अभ्यास का पेश करना होता है तब अगर मुनासिब होता है तो दूसरी युक्ति यानी शब्द-अभ्यास की तर्कीब बतलाई जाती है। हर किसी को अभ्यास की युक्तियाँ पोशीदा रखने का वादा करना होता है-इसके लिये कोई ख़ास क़सम नहीं ली जाती-सिर्फ़ वादा करना ही काफ़ी समझा जाता है क्योंकि अगर कोई शख़्स अपने वादे का ख़्याल नहीं रख सकता तो क़सम की क्या परवाह करेगा।

अभ्यास में हस्ब दिलख़्वाह कामयाबी हासिल करने के लिये सच्चे अनुराग और मन इन्द्रियों के भोगों की तरफ़ से किसी क़दर वैराग्य की ज़रूरत है। परमार्थी के लिये हिदायत है कि जिस दिन से अभ्यास की युक्ति ले अपना खाना मिक़दार से एक चौथाई कम करदे ताकि तबीयत हल्की रहे और आलस व नींद बवक़्त अभ्यास न सतावें। और यह भी हुक्म है कि संसार की भीड़ भाड़ व शोर गुल व परागन्दा ख़्यालात से यथा-

शक्ति परहेज़ करे ताकि मन अभ्यास के समय बेमतलब या फ़ासिद ख़्यालात उठाकर समय ख़राब न करने पावे ।

१८–अभ्यास की पहली युक्ति ऐसी आसान है कि हर मर्द व औरत, बच्चा, जवान, बूढ़ा, बीमार, तन्दुरुस्त खाते, पीते, चलते, फिरते हर समय उसे बख़ूबी कर सकता है । इस युक्ति का यह आशय है कि परमार्थी पहले अपनी तवज्जुह की धार को, जो तन मन और उनके पदार्थों में फँसी है, किसी क़दर समेट ले और नीज़ अपनी सुरत की शक्ति अभ्यास की मदद से किसी क़दर जगाले । जब परमार्थी को इसमें किसी क़दर मुहावरा हासिल हो जाता है तब युक्ति शब्द–अभ्यास की बतलाई जाती है और साथ ही मुफ़स्सिल भेद ब्रह्माण्ड व निर्मल चेतन देश के स्थानों के नाम, रूप, लीला व धाम के मुतअल्लिक़ समझाया जाता है ।

नोट–राधास्वामीमत में तन के देश को पिण्ड और निर्मल चेतन व मलिन माया देश कहते हैं–मन के देश को ब्रह्माण्ड और निर्मल चेतन व निर्मल माया देश कहते हैं–इनसे परे जो सुरत का धाम है उसको निर्मल चेतन देश कहते हैं–वहाँ माया का नाम व निशान भी नहीं है ।

१६—ज्यों ज्यों अभ्यासी अभ्यास करता है त्यों त्यों उसको इल्म मन की मलिनता और उसके बिकारों का बढ़ता जाता है और अपना तन और मन दोनों भारी बिघ्नरूप नज़राईं पड़ते हैं क्योंकि वे सुरत को हस्ब दिलख़्वाह चढ़ने व अभ्यास में लगने नहीं देते—इसकी वजह से सच्चे विरही के चित्त में वाज़ औक़ात बड़ी घबराहट और बेकली की सूरत पैदा होती है मगर ऐसे मौक़ों पर अक्सर गुरू महाराज की कृपा से यकायक इम्दाद मिलती है और बजाय थक जाने के अभ्यासी और भी ज़्यादा उमङ्ग व उत्साह के साथ अभ्यास में मसरूफ़ होता है और प्रीति व प्रतीति हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरण कमल में व नीज़ उनके सन्त सतगुरुस्वरूप में दृढ़ और मज़बूत करता है। होते होते इसको अपना मन कमज़ोर और दुर्बल नज़राईं पड़ने लगता है और कुल मालिक की रचा का पंजा अपने सिर पर प्रकट दिखलाई देता है और रफ़्ता रफ़्ता संसार और उसके सामान से अपनी अलहदगी देखता है तब इसको हक़्क़ुल-यक़ीन इस अम्र का होने लगता है कि मेरे दिल की मुराद पूरी हो रही है।

देखने में आता है कि दुनिया में इन्सान को पाँच या दस मौक़े ही ज़िन्दगी भर में ऐसे होते हैं कि जिनपर ग़ैरमामूली ख़ुशी हासिल हो—मस्लन ब्याह शादी का

मौक़ा–इम्तिहान में पास होने का मौक़ा–मुक़द्दमा जीतने का मौक़ा वग़ैरह वग़ैरह । इन मौक़ों के अलावा छिनभंगी दुख सुख का चक्र दिन रात चलता रहता है मगर परमार्थी को अभ्यास में साल में दस वीस मर्तबा ज़रूर ऐसा होता है कि हालाँकि दुनिया का कोई सामान नहीं मिलता मगर गुरू महाराज की मेहर से तवज्जुह की यकसूई ऐसी ग़ैरमामूली होती है और ऐसा ग़ैरमामूली रस व आनन्द अन्तर में आता है कि जिसका कोई वार पार नहीं–बाज़ औक़ात उसका असर तन और मन पर ऐसा होता है कि कई रोज़ तक उसकी तबीयत मस्त और सरशार रहती है । ऐसे तजरुबे दया व मेहर के पाकर अभ्यासी की जो हालत होती है वह पूरी पूरी बयान में लानी ग़ैरमुमकिन है । एक तरफ़ अपना मन मलिन और ऐबों से भरा हुआ देखता है और अपना आपा निहायत नाक़ाबिल और निबल महसूस करता है दूसरी तरफ़ समर्थ दयाल की अपार दयालुता व सहायता के भरपूर तजरुबे हासिल करता है और सहज में यहाँ से अपना छुटकारा और मालिक के चरणों में मेल होता हुआ परखता है ।

सतसंग का बयान ।

२०—जैसे अभ्यासियों और महात्माओं के गुप्त हो जाने से भेद सच्चे मार्ग का और सच्ची करनी मादूम हो गये और उनके बजाय मनमानी कार्रवाइयाँ जारी हो गईं इसी तौर पर बहुत से अल्फ़ाज़, जो ख़ास ख़ास और निहायत उत्तम मानी में इस्तेमाल किये जाते थे, मन-माने मानी में इस्तेमाल होने लग गये—मस्लन् एक भिखमंगा भी आज कल अपने तईं साध सन्त बतलाता है—ऐसेही लफ़्ज़ सतसंग भी संसारी लोगों ने निहायत ज़लील कर दिया और जहाँ कहीं दस पाँच आदमी मिल जुल कर किसी धार्मिक विषय पर सभा विलास करें या पिछले देवताओं या सूरमाओं के क़िस्से कहानी का तज़किरा करें उसको सतसंग के नाम से मौसूम करते हैं। सतसंग के असल मानी सत्यपुरुष का संग है इसलिये जहाँ कहीं पर सच्चे सन्त, जो अवतार सत्यपुरुष के हैं, बिराजमान हों या फिर उनके निज सतसंगी जो ज़ेर निगरानी उनके प्रेम और सचौटी के साथ अभ्यास करते हों व सच्चे मालिक का निर्णय व कीर्तन और उससे मिलने के सच्चे रास्ते और युक्ति का बयान करें उस संगत का नाम असल सतसंग है। ऐसे संग व सोहबत के फ़ायदों का वर्णन जितना भी किया जावे थोड़ा है।

कबीर साहब ने फ़र्माया है:—

शब्द

'मैं तो आन पड़ी चोरन के नगर सतसँग बिना जिया तरसे।
इस सतसँग में लाभ बहुत है तुरत मिलावे गुरु से।
मूरख जन कोई सार न जाने सतसँग में अम्मृत बरसे।
शब्द सा हीरा पटक हाथ से मुट्ठी भरी कंकर से।
कहें कबीर सुनो भाई साधो सुरत करो वाहि घर से।'

ऐसे संग साथ में हाज़िर रहकर इन्सान सहज में अपने मन की तमाम शङ्काएँ दूर कर सकता है और चित्त की किसी क़द्र सफ़ाई व निश्चलता हासिल करके सहूलियत के साथ इस संसार सागर से तरने व कुल मालिक से मिलने की युक्ति की कमाई कर सकता है।

२१—अलावा इसके अगर वाक़ई कहीं पर सच्चे साध सन्त मौजूद हैं तो जैसा कि आज कल सायंस (Science) भी मानता है और तस्वीरों में पिछले वक्तों के अवतारों के मुखड़ों के गिर्द दिखलाया भी जाता है उनके रोम रोम से पवित्र चेतनता की धार निकलती होगी। मामूली इन्सान से जो धारें निकलती हैं वे मलिन होती हैं क्योंकि उसका हृदय मलिन है और उसमें बिकारी अङ्ग प्रबल हैं। मगर साध सन्त का हृदय निहायत पवित्र होने के अलावा उनकी सुरत

निहायत चेतन है और सत्यपुरुष से, जो महाबिशेष चैतन्य के भंडार हैं, मेल कर रही है इस लिये उनके शरीर से जो 'औरा' निकलता होगा उसकी पवित्रता का क्या अन्दाज़ा हो सकता है। पस ऐसे महापुरुष के 'औरे' की धारों ही में स्नान करते रहने से सहज में बिकारी अङ्गों का मर्दन हो सकता है और इसकी वजह से कमाल सहूलियत अभ्यास की युक्ति की कमाई में हो सकती है।

२२–यह देखने में आता है कि मसखरों की सोहबत में बैठने उठने से थोड़े ही दिनों में इन्सान मसखरा बन जाता है और जुवारियों और ठगों की सोहबत में बैठ कर इन्सान उनकी आदत सीख लेता है, जैसा कि कहा है:–

'संग साथ सोहबत का असर बहुत नहीं तो थोड़ा थोड़ा'

और शेख सादी का भी कलाम है:—

'सगे असहाबे कहफ़ रोज़े चन्द
पये नेकाँ गिरिफ़्त व मर्दुम शुद।
पिसरे नूह बा बदाँ बिनिशस्त
खान्दाने नुबूवतश् गुम् शुद।'

यानी नेकों की सोहबत में कुछ रोज़ बैठने से कुत्ता भी इन्सान बन गया और हज़रत नूह के बेटे ने बदों की सोहबत में बैठकर अपने खान्दान से नुबूवत को खो

दिया । इस लिये जिस किसी संग सोहबत में हस्ब मज़कूरा बाला कुल मालिक की महिमा और उनसे मिलने की युक्ति व उसके मुतअल्लिक़ निर्णय बिचार और नीज़ उसका अभ्यास शबोरोज़ जारी हो उस संग सोहबत में बैठने से किस क़दर मदद परमार्थी कार्रवाई करने में मिल सकती है उसका हर कोई दिल में बिचार कर सकता है। अलावा इसके आज कल जो ज़ोर विलायत के मुआफ़िक़ ऐसे स्कूल व कालेज बनाने पर दिया जाता है जहाँ विद्यार्थियों के रहने का भी इन्तिज़ाम हो वह इसी ग़रज़ से है कि विद्यार्थी दुनिया के नापाक गिर्दोनवाह से बचकर ऐसी हवा में बास करें जहाँ पर सिवाय पढ़ने लिखने के किसी बात का तज़किरा न हो ताकि सहज में वे अपनी तवज्जुह एकसू करके कामयाबी हासिल कर सकें। इसी तौर पर परमार्थ के चाहने वालों के लिये भी सच्चे सतसंग की बहुत ज़रूरत है ।

२३—अगर ग़ौर से देखा जावे तो मन की यह आदत है कि या तो परमार्थ से सोना चाहता है यानी थक थका कर इधर उधर का बहाना पेश करके ग़ाफ़िल होना चाहता है या फिर जोश व ख़रोश में भरकर दौड़ धूप करना चाहता है। ज़ाहिर है कि दोनों हालतों में परमार्थ का नुक़्सान मुतसव्विर है;

इसलिये निहायत ज़रूरी है कि हर एक अनुरागी भक्तजन इन विघ्नों से बचने की फ़िक्र करे। सहज युक्ति इनसे बचने की सिर्फ़ सतसंग है। वहाँ पर हाज़िरी देने और वहाँ की बात चीत सुनने से मन पर इस क़िस्म की चोट व रोक लगती रहेगी कि जिस-की वजह से यह न तो सोने ही पावेगा और न बहने ही पावेगा और सहज में मध्य की चाल, जो सच्चे परमार्थ में निहायत ज़रूरी है, चलता रहेगा। मन को भड़काने और संसार में बहाने वाले बहुत हैं और संसार के भोग विलास या मान बड़ाई में उलझा कर सच्चे परमार्थ से ग़ाफ़िल करा देने वाले भी बहुत हैं मगर इसको जगाकर मध्य की चाल चलाना बग़ैर सुरतवन्त पुरुष के, जिसकी सुरत यानी रूह जगी है और जो ख़ुद अपने मन पर पूरा क़ाबू किये हुए है, किसी से हर्गिज़ हर्गिज़ मुमकिन नहीं है।

ये सब फ़ायदे तो सतसंग के हैं ही मगर इन सबसे बढ़कर फ़ायदा यह है कि इसमें शिर्कत करने से जीव को मौक़ा साध सन्त के चरणों में प्रीति प्रतीति बढ़ाने का भरपूर मिलेगा—चूँकि अन्तर में अभ्यास भी उन्हीं की मदद से बन सकता है और बाहर के विषयों से नफ़रत और तन व मन के बन्धनों का टूटना उन्हीं की प्रीति से मुमकिन है इसलिये सत-

संग की हाज़िरी देकर हर सतसंगी सहूलियत के साथ अन्तर बाहर मुनासिब परमार्थी कार्रवाई करके अपना भाग जगा सकता है ।

सतसंग के मज़कूराबाला फ़ायदों पर ग़ौर करने से मालूम होगा कि सन्तों का सतसंग करने ही से सच्चे परमार्थ का कमाना और अभ्यास की युक्ति पर अमल करना कैसा सहल हो जाता है और संसार से अलहदगी और मालिक के चरणों से मेल किस क़दर आसान हो जाता है ।

राधास्वामी–सतसंग का बयान ।

२४–अब थोड़ा सा बयान उस कार्रवाई का करते हैं जो राधास्वामीमत में सतसंग के वक्त सन्त सतगुरु के चरणों की मौजूदगी में की जाती है–असल में यह समय इस मत में इबादत व पूजा का है और इसमें शिर्कत करने से सेवकों को पूरा मौक़ा रूहानी तालीम हासिल करने व अभ्यास की कमाई करने का मिलता है । सन्त सतगुरु, जो मुखिया यानी कराने वाले इस कार्रवाई के होते हैं, ज़रा ऊँची जगह पर बिराजते हैं ताकि सब हाज़िरीन सतसंग उनके कलाम को आसानी से सुन सकें । मर्द व औरत दोनों सतसंग के वक्त हाज़िर रहते हैं

मगर स्त्रियाँ मर्दों से बिलकुल अलग बैठती हैं और उनके लिये पर्दे का पूरा इन्तिज़ाम रहता है। बाहरी लोग बिला ख़ास तौर पर इजाज़त हासिल करने के सतसंग में शरीक नहीं हो सकते और इजाज़त सिर्फ़ ऐसे लोगों को दी जाती है जो जिज्ञासू की रीति से सन्तमत के उसूलों को समझना व सीखना चाहें। ख़ास वजह बाहरी लोगों को मना करने की यह है कि अक्सर करके सतसंग के वक़्त और आगे पीछे सतसंगी लोग शब्द-अभ्यास भी करते हैं और यह अभ्यास ग़ैर लोगों की मौजूदगी में नहीं किया जा सकता है।

सबसे अव्वल मंगलाचरण का पाठ होता है और यह सब सेवक मिलकर गाते हैं। मंगलाचरण में वर्णन हुज़ूर राधास्वामी दयाल की उस अपार बख़्शिश का है जो उन्होंने जीवों के हाल पर इस सत्य मार्ग को प्रकट करके फ़र्माई और नीज़ गुणानुवाद उस अपार दया का है जो वे सदा अपने शरणागत बच्चों पर-अन्तर में उनको निर्मल चेतन देश की तरफ़ (जोकि परम और अबिनाशी आनन्द का धाम है) चलाने में फ़र्माते हैं। सबसे आख़ीर में इसी तौर पर एक बिनती का पाठ होता है मगर मंगलाचरण से बिनती का मज़मून मुख़्तलिफ़ होता है। इसमें यह प्रार्थना की गई है कि वे मालिक दयाल अपने तमाम कमज़ोर

और नादान बच्चों की पूरी सहायता फ़र्मावें क्योंकि बग़ैर उनकी सहायता के सच्चे उद्धार की कार्रवाई करने में जीव क़तई लाचार है। और साथ साथ यह माँग होती है कि सबके हृदय में सच्चा प्रेम कुल मालिक के चरण कमल की जानिब जागे क्योंकि बग़ैर सहायता व प्रेम की प्राप्ति के कुल मालिक के दर्शन की प्राप्ति और उनके परम पवित्र चरणों में बास मिलना ग़ैरमुमकिन है।

बीच के वक़्त सन्तों की रची हुई बानी का (जो कि नज़्म व नस्र दोनों में है) सिलसिलेवार पाठ होता है। इस बानी में जो बात सहज में समझ में न आने वाली हो सन्त सतगुरु उसके अर्थ बयान फ़र्माते हैं या ख़ास चर्चा यानी उपदेश उस मज़मून पर फ़र्माते हैं। इसके अलावा और भी अक्सर उपदेश किये जाते हैं जिनमें या तो सन्तमत के उसूलों की या अभ्यास के मुतअल्लिक़ बातों की बादलील और इल्मी तौर पर व्याख्या की जाती है। जितने वक़्त बानी का पाठ होता रहता है सतसंगी लोग उस समय संग संग, जहाँ तक बन पड़ता है, अपने अभ्यास–ख़ासकर ध्यान की कार्रवाई में–मसरूफ़ रहते हैं क्योंकि उस वक़्त बवजह मौजूदगी सन्त सतगुरु के व बमदद अनुभवी मज़ामीन उस बानी के, जिसका पाठ वे सुनते हैं, सतसंगियों को कमाल सहूलियत इस अभ्यास

में मिलती है। साथ ही साथ कारंवाई मन की निर्मलता व चित्त की शुद्धता की जारी रहती है। तमाम बुराइयों की जड़ अज्ञान है जिसका तिमिर बुद्धि पर छाये रहने से बुरे कामों व हरकतों की बुराई दीख नहीं पड़ती है। साध सन्त के संमुख होने से यह अज्ञानता किसी क़दर दूर हो जाती है और उनके परम पवित्र चरण कमल की मौजूदगी ही से बाज़ औक़ात सतसंगी लोगों को अपनी कोर कसरें दरसने लगती हैं और उनकी निस्बत सच्चा और गहिरा पछतावा दिल में पैदा होता है। अलावा इसके सतसंग के वक़्त जो उपदेश होता है उससे अन्तर की सफ़ाई विशेष होती है और संग संग हाज़िरीन को मौक़ा निर्णयशक्ति के जगाने के लिये आला तालीम हासिल करने का मिलता है जिसकी मदद से वे रफ़्ता रफ़्ता इस क़ाबिल बन जाते हैं कि सहज में अपने मन की चाल को पूरे तौर पर निहारने लगें और निरख परख करके अपने मन की हर कारंवाई के अन्तर के अन्तर सन्तों की शिक्षा के बिरुद्ध जो कोई बासना छिपी हो उसको छाँट सकें। सन्त सतगुरु की मौजूदगी और उनकी चर्चा व सतसंग की दीगर कैफ़ियत से सतसंगी के परमार्थी उमङ्ग व प्रेम पर भी बड़ा असर पड़ता है और ज्यों ज्यों उसका अभ्यास बढ़ता जाता है सतसंग में बैठने से उसके अन्दर इस दर्जे का प्रेम जागता है कि

वह गद्‌गद और सरशार हो जाता है और संसार के भोग बिलास उसको तुच्छ नज़र आई पड़ते हैं और सतसंग की सब कार्रवाई एकदम मस्त व मगन करनेवाली दरसती है ।

परशाद व चरणामृत वग़ैरह का बयान ।

२५—बाज़ औक़ात सतसंगी लोग सन्त सतगुरु के संमुख हार व मिठाई परशाद के लिये पेश करते हैं—वे उनको स्पर्श करके पवित्र फ़र्माते हैं—बाद में वे चीज़ें कुल जमाअत में तक़सीम कर दी जाती हैं मगर चूँकि तादाद हाज़िरीन सतसंग की दिन बदिन बढ़ती जा रही है और इन कार्रवाइयों के सरंजाम देने के लिये बहुत समय दरकार होता है इस लिये आज कल इनका रिवाज कमी पर है ।

२६—सब कोई जानता है कि ज़हरीले जानवर साँप, कीड़े वग़ैरह अगर किसी खाने पीने की चीज़ को छू दें तो उसमें ज़हर का असर आजाता है और उस चीज़ के इस्तेमाल करने से खानेवाले पर ज़हर का असर चढ़ जाता है । नीज़ यह भी तजरुबा है कि अगर किसी खाने की चीज़ पर किसी की कुदृष्टि पड़ जावे, जिसको नज़र का लग जाना बोलते हैं, तो उस चीज़ में कुदृष्टि का असर आजाता है और या तो वह चीज़ गिर के ज़ाया

हो जाती है या अगर उसको इस्तेमाल किया जावे तो उससे खाने वाले को नुक़्सान पहुँचता है और छोटे छोटे बच्चे नज़र लगने से फ़ौरन् बीमार हो जाते हैं। मतलब इस बयान से यह है कि यह तजरुबे से साबित है कि जानवरों और मनुष्यों के छूने व दृष्टि वग़ैरह का असर खाने पीने की चीज़ों पर पड़ता है और चूँकि यह असर स्थूल घाट पर होता है इसलिये ऐसी चीज़ों के इस्तेमाल करने से इस्तेमाल करने वाले के तन पर असर आता है। इससे यह नतीजा निकालना बेजा न होगा कि साध सन्त महात्मा के किसी वस्तु के छूने या उसपर दृष्टि डालने से ज़रूर असर उस वस्तु पर पड़ता है और चूँकि वह असर रूहानी घाट का है इसलिये इस्तेमाल करनेवाले की आत्मा तक ज़रूर रूहानी असर उन चीज़ों के इस्तेमाल से पहुँचता है। चूँकि साध सन्त महात्मा के हाथ पाँव वग़ैरह से निर्मल चेतन धार हरदम जारी रहती है इसलिये उनके चरण धोकर पीने या उनका इस्तेमाली वस्त्र पहनने से भी भारी रूहानी लाभ होता है।

इसी वजह से तो हिन्दुओं में रिवाज ठाकुर जी का चरणामृत व परशाद लेने का व देवी जी व हनूमान जी का परशाद बाँटने का और बनारस के गोपाल मंदिर वग़ैरह का परशाद ख़रीद कर खाने का जारी

हुआ । इसी तौर पर अहले इसलाम में काबा शरीफ़ के कपड़े व चाह ज़मज़म् के पानी का इस्तेमाल और ईसाइयों में शनिश्चर के दिन सेक्रामेन्ट (Sacrament) खाने का (जिसको हज़रत मसीह का खून व गोश्त तसव्वुर करते हैं) तरीक़ जारी है । और सिक्खों व कबीर पन्थियों और दूसरे अनेक मतों में बराबर परशाद तक़सीम किया जाता है । ज़ाहिर है कि जब कृष्ण महाराज या देवी देवता या दूसरे महापुरुष देहरूप में मौजूद थे तो उन दिनों में लोग आज कल की तरह फ़रज़ी भोग लगवाकर चरणाम्रृत व परशाद न लेते होंगे बल्कि खुद कृष्ण महाराज व हज़रत मसीह व गुरू साहिबान भोग लगाकर बाद में परशाद तक़सीम कराते होंगे । इसलिये राधास्वामीमत में जो सिलसिला हार परशाद वग़ैरह का जारी है यह कोई नवीन कारवाई नहीं है और न ही, जैसा कि अनजान मोतरिज़ लोग कहते हैं, महज़ लोगों का ईमान बिगाड़ने के लिये जारी की गई है बल्कि ज़मानए क़दीम से—जबसे कि महात्माओं की आमद हुई—इसका रिवाज बराबर जारी है और आला दर्जे के रूहानी उसूल पर इसका इनहिसार है ।

सेवा।

२७–हाफ़िज़ ने कहा है:—

'बमै सज्जादः रंगीं कुन गरत् पीरे मुग़ाँ गोयद।
कि सालिक बेख़बर न बुवद ज़ि राहोरस्मे मंज़िलहा॥'

यानी अगर मुर्शिद (सन्त सतगुरु) तुमको हुक्म करें कि आसन को शराब से तर करो (हालाँकि फ़ुक़रा के मज़हब में शराब के नज़दीक तक जाने की इजाज़त नहीं है) तो तुम फ़ौरन उनके ऐसे हुक्म की भी तामील कर डालो क्योंकि सन्त सतगुरु ख़ूब जानते हैं कि किस मौक़े पर क्या कार्रवाई करनी मुनासिब है। इस वास्ते जब मुर्शिदे कामिल यानी पूरे गुरू मिल जावें और उनपर निश्चय आजावे तो हरएक परमार्थी पर फ़र्ज़ है कि दीन अधीन होकर सच्चे दिल से उनकी सेवा व ख़िदमत बजा लावे– जो काम कहा जावे दिल में उसकी ज़रूरत व मन्फ़अत की निस्बत कोई शङ्का न लावे बल्कि दिल व जान से उस सेवा की अन्जामदेही में मसरूफ़ हो।

दुनिया में भी देखिये अगर करने से पहले हर काम की निस्बत हुज्जत उठाई जावे और 'क्यों' 'किस वास्ते' का जवाब तलब किया जावे तो ऐसा करने से जो गड़बड़ संसार में मच सकती है उसका हद व हिसाब लगाना मुश्किल है। मस्लन् उस्ताद बच्चे को पढ़ाना

शुरू करे और हुक्म दे कि कहो अलिफ़, बच्चा कहे कि क्यों अलिफ़, जीम क्यों नहीं, या लड़ाई लग रही हो और कमान अफ़्सर हुक्म गोली मारने या धावे का दें और सिपाही लोग ज़िद करें कि पहले मन्फ़अत इसकी बतला दीजिये पीछे हम तामील करेंगे वग़ैरह वग़ैरह। इस तौर पर अनेक प्रकार की दिक़्क़तें पैदा होंगी जिनसे दुनिया का काम चलना ग़ैरमुमकिन हो जावेगा। इसलिये सन्तों के मत में हुक्म है कि खोजी परमार्थी को चाहिये कि शरीक होने से पहले पूरे तौर पर रद्द व कद्द यानी निर्णय विचार मत के उसूलों व कार्रवाइयों की निस्बत करे मगर जब निश्चय आजावे तब मन की इस क़िस्म की चञ्चलता को दूर करके हमातन सेवा व सतसंग वग़ैरह में मसरूफ़ हो। इस तरीक़े अमल से ही उम्मीद हुसूले मुराद की की जा सकती है जैसा कि कहा है:—

'सेवा करे सो मेवा पावे।'

२८—सब लोग जानते हैं कि जहाँ पर ग़रज़ अटकती है वहाँ इन्सान दौड़ दौड़ कर जाता है और हर क़िस्म की ख़िदमत बजा लाता है, मस्लन् तहसीलदारों, कलक्टरों, कमिश्नरों वग़ैरह के दर्वाज़े पर सुबह शाम अहलकारों व दीगर लोगों की भीड़ लगी रहती है—हकीमों और डाक्टरों के मकान पर बीमार लोग बराबर हाज़िरी देते हैं और हर कोई यही कोशिश

करता है कि किसी तरह से हाकिम व हकीम की ख़ास तवज्जुह अपने ऊपर ले और इसके लिये हर तरह की ख़िद्मत उनकी बजा लाता है और तरह तरह के तोहफ़े तहायफ़ पेश करता है और देखने में आता है कि कुछ अर्से ऐसा करते करते एक तरह का सिलसिला मुहब्बत का हाकिम व हकीम से क़ायम करके इन्सान मस्त व मगन होता है यानी हाकिम की दोस्ती से आशा दुनिया में इज़्ज़त, रुतबा, तरक़्क़ी या दुश्मनों से बचाव वग़ैरह की बाँध कर और हकीम की दोस्ती से उम्मीद वक़्त बेवक़्त दुख दर्द की हालत में मदद पाने की करके अपने भाग सराहता है। जानवर तक सुबह शाम घास दाना मिलने की वजह से तन तोड़ कर अपने आक़ा की ख़िद्मत करते हैं और जो जानवर सरगर्मी से मेहनत करते हैं उनसे आक़ा प्यार करने लगता है और बेमतलब उनको तकलीफ़ नहीं देता है बल्कि उनके खाने पीने व आराम की ख़ास फ़िक्र करता है। इसी तौर पर निहायत लाज़िमी हुआ कि सन्त सतगुरु की, जो कि वक़्त के हाकिम व हकीम हैं यानी जिनकी मदद के बग़ैर न कोई इस संसार की क़ैद से छूट सकता है और न ही अपने मन इन्द्रियों के रोग से नजात पा सकता है, प्रेमी परमार्थी अव्वल तन, मन, धन से सेवा करे और उनकी प्रसन्नता हासिल करे और करते करते उनसे रिश्ता मुहब्बत व प्रीति का

क़ायम करे । अब उस प्रीति लगाने का फ़ायदा सुनिये ।

२६–देखने में आता है कि जिस किसी से इन्सान की प्रीति लग जाती है उसकी दिलजोई के लिये वह दिन व रात फ़िक्र करता है और जो कुछ बासना प्रीतम के अन्दर प्रबल होती है फ़ौरन उसके पूरा करने के लिये यत्न करता है, मस्लन बच्चे व औरत के लिये सौ तरह का हर्ज मर्ज करके मिठाई, कपड़ा, ज़ेवर वग़ैरह मुहैया करता है–जिस बस्तु को प्रीतम चाहता है उसी को यह भी पसंद करता है–जो वस्तु प्रीतम को बुरी लगती है यह भी उससे दिली नफ़रत करता है–जहाँ पर प्रीतम क़याम करता है वहीं पर रहने की यह भी आरज़ू करता है–जिधर को प्रीतम जाता है संग संग जाने में यह भी कमाल दर्जे की ख़ुशी महसूस करता है और उसके पीछे पीछे जाता है–कुत्ता, बन्दर वग़ैरह जानवर तक ऐसा ही करते हैं । इसी तौर पर अगर किसी शख़्स की सच्ची प्रीति सन्त सतगुरु से लग जावेगी तो वह भी हरदम उनकी रग़बत व नफ़रत को मद्दे नज़र रक्खेगा और चूँकि वह सच्चे आशिक़ कुल मालिक के हैं और सख़्त नफ़रत इस मलिन संसार से करते हैं इसलिये उस प्रीति करने वाले के अन्दर भी सहज में संसार से बैराग्य व नफ़रत और मालिक के चरणों में प्यार व मुहब्बत पैदा होती जावेगी और होते होते सन्त सतगुरु की अन्तरी

बासना इसके चित्त में बसकर यह गहरा और सच्चा परमार्थी बनकर निहायत आसानी के साथ इस भवजल से पार हो कर कुल मालिक के चरणों में बास पावेगा।

३०–ज़रा ग़ौर करने का मुक़ाम है कि यह महा दरिद्र भिकमंगा जीव–तन व मन के तुच्छ भोग बिलास के लिये दिन रात तरसता हुआ–तीनों तापों की अग्नि में हर दम जलता हुआ–अगर मन इन्द्रिय के रोगों से सड़े और गले हुए तन को सन्त सतगुरु की सेवा में पेश करता है तो क्या एहसान करता है–सच तो यह है कि वह समर्थ दयाल इसपर रहम करके इसकी सोहबत गवारा फ़र्माते हैं और इसका भाग जगाने के निमित्त थोड़ी बहुत सेवा इससे लेते हैं और इस तरीक़े से इसकी तवज्जुह अपने में बाँध कर इसको संसार से उपराम करते हैं और अभ्यास की युक्ति की कमाई कराके इसको तन व मन से आज़ाद फ़र्माते हैं। ऐसी सूरते हाल में यह तर्क उठाना कि सन्त सतगुरु इसके धन या सेवा के मोहताज हैं किस दर्ज़े की नादानी की बात ठहरती है। फ़र्माया है :—

'गुरु नहिं भूखा तेरे धन का, उन पै धन है भक्ति नाम का।
पर तेरा उपकार करावें, भूखे प्यासे को दिखलावें।
उनकी मेहर मुफ़्त तू पावे, जो उनको परसन्न करावे।

३१–अब आगे हुज़ूर राधास्वामी दयाल का फ़र्माया हुआ एक शब्द दर्ज करते हैं जिसमें परमार्थ की प्राप्ति का तरीक़ा निहायत ख़ूबसूरती के साथ संक्षेप में वर्णन फ़र्माया गया है:—

शब्द

प्रेमी सुनो प्रेम की बात । टेक ।
सेवा करो प्रेम से गुरु की, और दर्शन पर बलि बलि जात ।
बचन पियारे गुरु के ऐसे, जस माता सुत तोतरि बात ।
जस कामी को कामिनि प्यारी, अस गुरुमुख को गुरु का गात ।
खाते पीते चलते फिरते, सोवत जागत बिसर न जात ।
खटकत रहे भाल ज्यों हियरे, दर्दी के ज्यों दर्द समात ।
ऐसी लगन गुरू सँग जाकी, वह गुरुमुख परमारथ पात ।
जब लग गुरु प्यारे नहिं ऐसे, तब लग हिर्सी जानो जात ।
मनमुख फिरे किसी का नाहीं, कहो क्योंकर परमारथ पात ।
राधास्वामी कहत सुनाई, अब सतगुरु का पकड़ो हाथ ।

यानी ऐ प्रेम के तलबगार! सुनो, प्रेम कैसे प्राप्त हो सकता है–अव्वल पूरी तवज्जुह लगाकर यानी दिल व जान से वक़्त के गुरू की सेवा करो और सतसंग की हाज़िरी देकर गहरे प्यार के साथ उनके दर्शन करो-सतसंग में बैठकर उनकी बात चीत यानी उनके कलाम को ग़ौर के साथ सुनो और जैसे माँ अपने छोटे बच्चे

की तोतली बात चीत को बार बार ख़्याल में लाकर हर्षती है इसी तौर पर तुम भी गुरू महाराज के बचन बानी को बार बार मनन करके रस लो। इस तौर पर अपने अन्तर में गुरू महाराज की निस्बत ऐसा प्यार और इश्क़ पैदा कर लो जैसा कि पुरुष अपनी स्त्री के संग करता है यानी खाते, पीते, चलते, फिरते, सोते, जागते कभी उनकी सूरत तुम्हारे चित्त से बिसरे नहीं और हर हाल में दुनिया का काम काज करते हुए भी अपनी तवज्जुह उनके चरणों में लगाये रहो। सिर्फ़ इतना ही नहीं बल्कि यह कार्रवाई खटक के साथ करो—साधारण तौर पर नहीं—यानी जैसे किसी दर्दमंद के पीड़ उठती है इस तौर पर उचक उचक कर तुमको उनके चरणों की याद आनी चाहिये, बग़ैर उनका अन्तर बाहर दर्शन प्राप्त किये तुमको कल नहीं पड़नी चाहिये। फ़र्माया है कि जिस किसी की गुरू महाराज के संग इस तरह की सच्ची और गहरी प्रीति होगी यानी मुख्य धार जिसकी तवज्जुह की उनके चरणों की जानिब मुख़ातिब होगी वही गुरुमुख है और उसी को परम अर्थ यानी प्रेम की दौलत नसीब होगी। और जब तक किसी को इस तौर की प्रीति पैदा न होगी तब तक वह हिर्सी है यानी दूसरों की उच्च गति देखकर यानी प्रेम की दौलत की महिमा सुनकर महज़ मुँह से राल बहाता है मगर उसकी प्राप्ति के लिये

मुनासिब यत्न नहीं करता है और मुख्य धार अपनी तवज्जुह की मन की ज़ानिब बहाता है और इस लिये किसी मसरफ़ का नहीं है—भला उसको कैसे परमार्थ की दौलत मिले । हुज़ूर राधास्वामी दयाल यह समझा कर और गुरुमुखता की सच्ची दशा का वर्णन करके फ़र्माते हैं कि अगर तुमको शौक़ इस भारी दौलत के हासिल करने का है तो वक़्त के सतगुरु का हाथ पकड़ लो—अब भी मौक़ा है—यह महज़ ख़्याली या ज़बानी बात चीत नहीं है बल्कि पूरा अवसर इसके लिये अब भी मौजूद है ।

तितिम्मा ।

३२–यहाँ तक जो कुछ बयान हुआ उससे मालूम होगा कि राधास्वामीमत सच्चा क़ुदरती मज़हब है और इसके अभ्यास की युक्ति व दीगर कार्रवाई, जो इसमें जारी है, बवजह क़ुदरती होने के निहायत आसान और सुगम है–और यह भी मालूम होगा कि पिछली टेक व रसूम और ज़बानी जमा खर्च को, जो कि दूसरे मतों की जान हैं, इसमें सख़्त नापसन्द किया गया है और ज़ोर इस बात पर दिया गया है कि वक़्त के पूरे गुरू की मदद से और सच्चे अभ्यास की कमाई से सुरत यानी रूह को तन और मन से और नीज़ तन और मन के देश से न्यारा करके अपने स्रोत पोत में, जिसको कि कुल मालिक कहते हैं, पहुँचाया जावे ताकि अमर और अविनाशी परम आनन्द की प्राप्ति हो और दुख से सदा के लिये निवृत्ति हो ।

३३–पिछले ज़माने में जितने अवतार हुए उनमें से हस्ब फ़र्मान उनके कोई खुदा के पुत्र थे, कोई खुदा के पैग़म्बर थे, और कोई उनकी कला थे। परब्रह्मपद और उसके परे के भेद की निस्बत वेद भगवान ने 'नेति नेति' यानी 'यहीं ख़ातमा नहीं है', 'यहीं ख़ातमा नहीं है' करके छोड़ दिया है। इसी तौर पर जैनियों के इष्टदेव

तीर्थङ्कर व महात्मा बुद्ध के भी कौल के बमूजिब उनकी आमद निर्वाण पद से, जो कि सन्तों का ब्रह्मपद है, हुई । गुरू गोबिन्द सिंह साहब ने भी फ़र्माया है:—

'जे मोको परमेश्वर उचरि हैं, ते सब घोर नरक में पड़ि हैं ।
मोंको दास तिन्हाँ का जानो, या में भेद न रंच पहिचानो।'

किसी ने अपने तईं कुल मालिक या सत्त करतार या उनका अवतार नहीं कहा । ज़ाहिर है कि वे बजुज़ अपनी असल गति के दूसरी बात क्यों बतलाते। बरख़िलाफ़ इसके हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने सम्पूर्ण भेद पिण्ड, ब्रह्माण्ड और निर्मल चेतन देश का मुसलसल बयान फ़र्माकर यह समझाया कि जैसे इन्सान के छठे चक्र पर सुरत यानी आत्मा की बैठक है इसी तौर पर बाहर में पिण्ड के छठे चक्र में पिण्ड के धनी का बास है और ऐसे ही ब्रह्माण्ड के छठे कँवल में ब्रह्माण्ड के धनी की बैठक है और इसी तौर पर निर्मल चेतन धाम के छठे पद्म में कुल मालिक का बास है और उसको राधास्वामी अनामी पद कहते हैं ।

ज़ाहिर है सिवाय कुल मालिक या उनके स्थान से आये हुए पुरुष के कोई धुर धाम तक का भेद न दे सकता था। हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने फ़र्माया है:—

'देख पियारे मैं समझाऊँ रूप हमारा न्यारा ।
वह तो रूप लखे नहिं कोई जब लगदूँ न सहारा ।

करनी करो मार मन डालो इन्द्री रोक दुवारा।
सुरत चढ़ाय गगन पर धावो सुन्न शिखर के पारा।
सत्तपुरुष का रूप दिखाऊँ अलख अगम दरसारा।
ताके आगे राधास्वामी वह निज रूप हमारा।'

कबीर साहब ने, जिनको कुल मालिक का निज पुत्र माना जाता है, फ़र्माया है:—

'कहें कबीर हम धुर घर के भेदी लाये हुकम हुज़ूरी।'

यानी कबीर साहब, जो कि धुर घर के भेद से वाक़िफ़ हैं, हुज़ूरी हुक्म यानी कुल मालिक का हुक्म लेकर आये हैं—चुनांचे उन्होंने पिण्ड ब्रह्माण्ड के कुल स्थानों और दयाल देश के पाँचवें पद यानी अगमलोक तक का मुफ़स्सिल भेद अपनी वाणी में फ़र्माया है और राधास्वामी-पद की निस्बत यह कहा है:—

'कबीर धारा अगम की सतगुरु दई लखाय।
उलट ताहि सुमिरन करो स्वामी संग मिलाय॥'

इस तौर पर पिछले कुल सच्चे मज़हबों के बानी मुबानियों के कलाम पर निष्पक्ष ग़ौर करने से साफ़ नतीजा निकलता है कि सिवाय हुज़ूर राधास्वामी दयाल के कोई कुल मालिक का अवतार न था।

३४–एक और बात ग़ौर के क़ाबिल है कि पिछले ज़माने के आचार्यों व अवतारों ने अपनी पुस्तकों में यह फ़र्माया कि हम ख़ातिमुल्मुर्सलीन हैं यानी हमारे बाद अब कोई अवतार न होगा अलबत्ता क़यामत जब नज़दीक आवेगी तब हम अपनी उम्मत यानी पैरोकारों की रक्षा के निमित्त फिर आवेंगे । चुनांचे सिक्खों के यहाँ कलगी अवतार, मुसल्मानों व ईसाइयों के यहाँ पैग़म्बर साहब व हज़रत मसीह की दुवारा आमद व बौद्धों के यहाँ महात्मा बुद्ध का दुवारा अवतार लेने और हिन्दुओं के यहाँ घोर कलियुग के समय के बादही सत्ययुग के आग़ाज़ होने के बाबत बराबर पुस्तकों में ज़िक्र है मगर बमुक़ाबले इसके कुल मालिक हुज़ूर राधास्वामी दयाल का फ़र्मान है कि जब तक कुल रचना का उद्धार न हो जावेगा निज धार यहाँ से हरगिज़ गुप्त न होगी । ज़ाहिर है कि सिवाय कुल मालिक के अवतार के कुल रचना के उद्धार का कौन ज़िम्मा ले सकता था–इस अम्र पर भी ग़ौर करने से यह नतीजा निकलता है कि सिवाय राधास्वामी दयाल के कोई अवतार कुल मालिक का नहीं हुआ ।

३५–इस मौक़े पर यह सवाल किया जा सकता है कि क्या वजह है कि कुल मालिक का अवतार पहले न

हुआ और खास इसी समय में हुआ। इसका जवाब अव्वल तो यही हो सकता है कि चाहे किसी समय में अवतार होता उस समय की निस्बत भी यह सवाल किया जा सकता था कि उसके आगे पीछे क्यों न हुआ मसलन् बजाय इस वक़्त के अगर सत्ययुग में होता तो सवाल हो सकता था कि त्रेता, द्वापर या कलियुग में क्यों न हुआ वग़ैरह वग़ैरह। दूसरे ख़्याल करना चाहिये कि हिन्दुओं के यहाँ ज़िक्र है कि मत्स्य, कच्छप, बाराह वग़ैरह दस अवतार हुए यानी जल की रचना के अवतार से शुरू होकर होते होते नरसिंह अवतार यानी आधे आदमी आधे जानवर का अवतार हुआ और फिर रामचन्द्र जी महाराज बारह-कला-धारी और उनके बाद महाकाल भगवान कृष्ण महाराज सोलह-कला-सम्पूर्ण का अवतार हुआ-इसके बाद तवारीख़ बतलाती है कि कुल मालिक के निज पुत्र कबीर साहब का अवतार हुआ और इसके बाद जैसा कि सिलसिले में चाहिये था खुद कुल मालिक राधास्वामी दयाल का अवतार हुआ। तीसरे यह बात भी ग़ौर के क़ाबिल है कि जैसे मनुष्य की ज़िन्दगी के चार हिस्से हैं यानी बचपन, जवानी, अधेड़ व बुढ़ापा, इसी तौर पर रचना की ज़िन्दगी के भी चार हिस्से हैं यानी सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग। जिस तौर पर चौथी अवस्था यानी बुढ़ापे में पहुँच कर क़ुदरती तौर

पर इन्सान के तन व मन की शक्तियाँ क्षीण होकर तैयारी चोला छूटने की होने लगती है इसी तौर पर चौथे युग यानी कलियुग में तैयारी रचना के सिमटाव की कुदरती तौर पर होती है। चूँकि कुल मालिक के अवतार धारण करने से मतलब सिवाय जीवों को निर्बन्ध करने और सुरतों को निज धाम में पहुँचाने और इस तौर पर रचना का अभाव करने के और कुछ नहीं हो सकता और चूँकि कुल कार्रवाई कुल मालिक की ऐन क़ुदरती क़ायदे पर होती है और जोकि सुरत उनकी अंश है इस लिये मिस्ल इन्सान के चोला छूटने के समय के कलियुग का ज़माना ही कुल मालिक के अवतार के लिये निहायत मौज़ूँ ठहरता है यानी सिर्फ़ इसी समय में बूढ़े शरीर की तरह निहायत आसानी से क़ुदरती तौर पर कुल रचना की जान निकल सकती है।

शब्द ।

ना जानूँ साहब कैसा है ॥ टेक ॥
कोई दिखावे काली मूरत
कोई बतावे गजानन सूरत ।
रूप भयंकर पेख होय हैरत
क्या साहब तू ऐसा है ॥ १ ॥

कोइ तुलसी पीपल बतलाते
कोइ भैंसा बकरा कटवाते ।
गाय साँप बन्दर पुजवाते
क्या साहब तू ऐसा है ॥ २ ॥
कोइ कहे तुम आकाशसरूपा
संस्कृत के बसो तुम कूपा ।
हवन यज्ञ के निश दिन भूखा
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ३ ॥
कोई कहे तुम अरब में बसते
कुराँ वज़ीफ़ा के बस रहते ।
नबी मेहर बिन कभी न मिलते
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ४ ॥
कोई कहे ईसा पुत्र तुम्हारा
आया जग में धर अवतारा ।
बिन उन मेहर न कोई सहारा
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ५ ॥
बिन गिरजा तुम आन न भावे
जो चाहे तुम्हें वहाँ ही पावे ।
इंजील का पढ़ना अधिक सुहावे
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ६ ॥
कबीर और नानक गुरु के घराने
ग्रन्थ बिना कोई गुरु नहिं माने ।

पुस्तक पूजें चौका आनें
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ७ ॥

हे साहब मेरे प्रीतम प्यारे
हे स्वामी मेरे प्राण अधारे ।
क्या सचमुच रहो इनके सहारे
जिनका भाखा लेखा है ॥ ८ ॥

मेरे मन अस निश्चय आई
तुम्हरे किंकर सब ये रहाई ।
तुम ते अधिका और न काई
क्या साहब तू ऐसा है ॥ ९ ॥

तन और मन और सूरत प्यारी
तीन वस्तु मोहिं दरसें न्यारी ।
अलग अलग इन रहें भँडारी
क्या साहब जग ऐसा है ॥१०॥

तन भँडार सब पिण्ड बखाना
मन भंडार ब्रह्मण्ड पहिचाना ।
सुरत भँडार मैं तुम को जाना
क्या साहब तू ऐसा है ॥११॥

भटक भटक मैं बहु भटकाया
कहीं खोज ना तुम्हरा पाया ।
राधास्वामी दर जब सीस नवाया
तब यह समझा लेखा है ॥१२॥